© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 01 | January – March 2017

लोकगाथा का स्वरूप , परिभाषा एवं उत्पत्ति

डॉ. राम मेहर सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
छोटूराम किसान स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, जीन्द।

ISSN : 2348-5612 © URR

भारत में कथात्मक गीतों के लिए कोई निश्चित नामकरण प्राप्त नहीं होता। भिन्न-भिन्नस्थानों पर इसके भिन्न-भिन्न नाम हैं। गुजरात में 'कथागीत' कहते ह। (1) 'राजस्थानीलोकगीत' के लेखक श्री सूर्यकरण पारीक ने इसे 'गीतकथा' कहा है। (2) महाराष्ट्र में इनकथागीतों को 'पँवाड़ा' कहते हैं। सारे उत्तर भारत में इन लम्बे कथागीतों के लिए कोई निश्चित नाम नहीं मिलता। प्राय: वर्ण्य-विषय के आधार पर ही इन गीतों का नामकरण कर दिया गया है, जैसे राजा गोपीचन्द के गीत, हीरराँझा के गीत, सोनीमहीवाल के गीत, कुँवर सिंह, विजयमल, आल्हा आदि। ग्रियर्सन ने इन कथागीतों को 'पापुलर साँग' कहा है। परन्तु इस नाम में कोई औचित्य दिखाई नहीं देता। क्योंकि 'लोकप्रिय गीत' तो और भी होते हैं।

इस प्रकार के कथात्मक गीतों के लिए भारत के विद्वानों ने तीन नाम प्रस्तुत किए है। पँवाड़ा, कथागीत तथा गीतकथा! 'पवाड़ा' महाराष्ट्र में प्रचलित है। इसका प्रयोग उत्तरीभारत में बहुत कम है। कथागीत और गीतकथा नामकरणों में कोई विशेष अन्तर दिखाई नहीं देता। डा0 कृष्णदेव उपाध्याय ने कथात्मक गीतों पर विचार करते हुए इन गीतों को 'लोकगाथा' नाम से अभिहित किया है। (3) यह नाम वास्तव में सार्थक है। क्योंकि 'गीतकथा' या 'कथागीत' शब्दों में लोकभावना की गंध नहीं मिलती । यह शब्द प्रयास पूर्वक निर्मित किया गया है। और फिर ये अंग्रेजी के 'बैलेड' शब्द के भावानुवाद से प्रतीत होते हैं। 'लोकगाथा' शब्द सार्थक एवं लोकभावना को लिए हुए है। यह अनुवाद से परे भारतीय लोकपरम्परा के अधिक
निकट है। वैसे 'गाथा' शब्द अत्यन्त प्राचीन है। अमरकोष और विष्णुपुराण में 'गाथा' शब्द का उल्लेख है। 'गाथा सप्तशती' आदि नाम भी पहले से ही प्रचलित हैं।
सर्वप्रथम 'गाथा' शब्द ऋग्वेद (8: 32 : 2) में मिलता है। यज्ञ के अवसर पर गाथा गाने की प्रथा वहाँ मौजूद थी। हिन्दी में यह शब्द वृत्तान्त या जीवनी के लिए प्रयुक्त होता था। हिन्दी में इसके लिए ग्रामगीत, नृत्यगीत, आख्यानगीत, आख्यानकगीत, वीरगाथा, वीरगीत, वीरकाव्य आदि अनेक शब्दों का प्रयोग विभिन्न विद्वानों ने किया है।

डा0 शम्भूनाथसिंह ने लोकगाथा को ग्रामगीत (लोकगीत) का एक प्रकार स्वीकार करते हुए लिखा है-''लोकगाथा में कोई कथा अवश्य होती है। पर सभी लोकगीतों और ग्रामगीतों के लिए कथातत्व आवश्यक नहीं। आख्यानगीत या आख्यानक गीत भी बैलेड का सही अनुवाद नहीं हैं, क्योंकि इससे बैलेड के लोककाव्य होने की व्यंजना नहीं होती है। आख्यानक गीत साहित्यिक भी होते है, पर उन्हें वास्तविक लोकगाथा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वे लोकगाथा की तरह मौखिक परम्परा में विकसित और लोकप्रचलित या लोकोद्भूत नहीं होते । वीरगीत से वीराताव्यंजक गीतिकाव्य का बोध होता है, पर लोकगाथा गीतिकाव्य के अन्तर्गत नहीं, आख्यानक काव्य या प्रबन्धकाव्य के अन्तर्गत आता है। वीरगाथा शब्द भी भ्रामक है क्योंकि सभी लोकगाथाएँ वीरतापरक ही नहीं होती, उनमें कुछ का वर्ण्य विषय प्रेम और शृंगार और कुछ का धर्म भी होता है। इसके अतिरिक्त वीरगाथा और वीरकाव्य शब्दों से उस लोकतत्व का बोध नहीं होता, जो लोकगाथा का अनिवार्य अंग है। अत: बलेड शब्द का सबसे उपयुक्त हिन्दी रूपान्तर लोकगाथा ही है।'' (4)

अंग्रेजी में लोकगाथा के लिये 'बैलेड' का शब्द का प्रयोग मिलता है। यह शब्द लैटिन भाषा के 'बै लारे' (ठंससंतम) धातु से निर्मित हुआ (5) जिसका अर्थ 'नाचना' है। राबर्ट ग्रेव्स ने लिखा है कि 'बैलेड' का सम्बन्ध 'बैले' से है जिसमें संगीत और नृतय की प्रधानता रहती हैं।

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 01 | January – March 2017

(6) पहले बैलेड के साथ सामूहिक नृत्य भी होता था। कालांतर में नृत्य वाला अंश गौण हो गया। अब केवल कथात्मक गीतों के लिए ही बैलेड कहा जाने लगा। वास्तव में बैलेड का मूल अभिप्राय उस प्रबंधात्मक गीत से था जो नृत्य के साथ गाया जाता था। बाद में चलकर नृत्य वाला अंश लुप्त हो गया।

अन्य पाश्चात्य देशों में भी ऊपर वाले अर्थ को लेकर वहाँ की ही भाषा में उसका नामकरण कर दिया गया। फ्राँस में बैलेड नाम ही प्रयुक्त होता है। जर्मनी में इसे 'व्होक रलाइडर
' कहा जाता है। बैलेड नाम भी वहाँ प्रचलित है। डेनमार्क में बैलेड को 'फोके बाइजर' तथा
स्पेन में 'रोमेनेकरों' कहा जाता है।

इसे विवेचन से यह सिद्व होता है कि बैलेड और लोकगाथा समानार्थी हैं और बैलेड के लिए लोकगाथा से उपुयक्त कोई दूसरा शब्द नहीं ह।

परिभाषा :-

विभिन्न विद्वानो ने लोकगाथा की अपने-अपने ढंग से परिभाषा दी है। कुछ परिभाषाएँ
इस प्रकार है।

1. ष । इंससंक पे ``वदह जींज जमससे ``जवतल वतए जव जांम जीम वजीमत चवपदज वि अपमू
. `जवतल जवसक पद `वदहण्ष (7) . च्तवणि ळण्स्ण ज्ञपजजतमकहमण

(बैलेड वह गीत है जिसमें कथा हो अथवा दूसरी दृष्टि से विचार करने पर बैलेड वह
कथा है जो गीतों में कही गई हो।)

2. षैपउचसम दंततंजपअम `वदह जींज इमसवदह जव जीम चमवचसम ंदक वत ींदकमक वद
इल ूवतक वि उवनजीण ष (8) . थ्तंदा ैपकहूपबाण

(वह सरल वर्णनात्मक गीत जो लोकमात्र की सम्पत्ति होती है और जिसका प्रसार
मौखिक रूप से होता है।)

अपनी दूसरी पुस्तक 'जीम ठंससंके' में सिजविक ने बैलेड की परिभाषा प्रस्तुत करने में अपनी असमर्थता करते हुए कहा है (9)

ष जीम कपर्पिबनसजल पे जव कमपिदम इंससंकए वित पज ीं `वउम वि जीम ुनंसपजपमे वि
ंद ंइेजतंबज जीपदह ण प्ज पे मेमदजपंससल सिनपक दवत तपहपक दव `जंजपबण्ष

(बैलेड अमूर्त पदार्थ के गुणों से युक्त है। यह कोई ठोस या स्थाई वस्तु नहीं बल्कि इसका स्वरूप रसात्मक होने के कारण द्रवरूप है।)

3. हैजलिट ने बैलेड की परिभाषा बतलाते हुए इसे गीतात्मक कथानक (पज पे ं सलतपबंस
दंततंजपअम)कहा है।

4. ष ।ैपउचसम `चपतपजमक चवमउ पद ीवतज `जंद्रें पद पद ूपबी `वउम च्वचनसंत
जवतल पे हतंचीबपंससल जवसक ष (10) . क्तण डनततंल

(बैलेड छोटे पदों में रचित ऐसी स्फूर्तिदायक सरल कविता है जिसमें कोई लोकप्रिय कथा अत्यन्त ही सजीव रीति से कही गई हो।)

5. ष । चवमउ उमंदज वित `पदहपदह ुनपमज पउचमतेवदंस पद उंजमतपंस चतवइंइसल बवददमबजमक पद पजे वतपहपद ूपजी जीम बवउउनदंस कंदबमए इनज `नइउपजजमक जव ं चतवबमे वि वतंस जतंकपजपवद ंउवदह चमवचसम ूव ंतम तिमम तिवउ सपजमतंतल पदसिनमदबमे ंदक पितसल उवदवहमदवने पद बींतंबजमतण्ष
. ए ण ठण ळनउउमतम

(बैलेड गाने के लिए रचित ऐसी कविता है जो सामग्री की दृष्टि से नितान्त व्यक्ति-शून्य और संभवत: उत्पत्ति की दृष्टि से समूह नृत्यों से संबद्ध हो किन्तु उसमें मौखिक परम्परा प्रधान हो गई हो।)

6. ष । वितउ वा दंततंजपअम विसा `वदह ष् डंब म्कूंतक स्मंबीण

(बैलेड प्रबन्धात्मक या आख्यानात्मक लोकगीत का एक प्रकार है।)

7. ष जीम दंउम हपअमद जव ``जलसम वा अमतेम वा नदादवूद 'नजीवतींपच कमंसपदह ूपजी मचपेवकम वत `पउचसम उवजपअम तंजीमत जींद `नेजंपदमक जीमउम ूतपजजमद पद ' जंद्रवपब तिवउ उवतम वत समे पिगमक 'दक `नपजंइसम वित जीम वतंस जतंदेउपेपवद 'दक जतमंजउमदज `ीवूपदह सपजजसम वत दवजीपदह वा पिदमदमे वा कमसपइमतंजम 'तजष

. म्दबलबसवचमंकपं ठतपजंदपबं (ठंससंक . च्ंहम 993)

(बैलेड ऐसी पद्यशैली का नाम है जिसका रचयिता अज्ञात हो, जिसमें साधारण आख्यान हो और जो सरल मौखिक परम्परा के लिए उपयुक्त तथा ललित कला की सूक्ष्मताओं से रहित हो)

8. ष । इंससंक पे ``पउचसम दंततंजपअम सलतपबए ``वदह वा ादवू वत नदादवूद वतपहपद जींज जमससे ``जवतलण्ष

. म्दबलबसवचमंकपं ।उमतपबंदं (टवसण ्प्प् ठंससंक . च्ंहम 94)

(बैलेड एक साधारण कथात्मक गीत है जिसकी उत्पत्ति संदिग्ध है।)

बैलेड को रूसीभाषा में 'बिलीना',स्पेनिश में 'रोमांस', डेनिश में 'वाइज', यूक्रेन में 'डुमी' तथा सर्वियन में –'पेस्मी' कहते हैं।

उपर्युक्त पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं से ज्ञात होता है कि विद्वानों ने एक ही तथ्य को अपनी –अपनी भाषा में अलग–अलग ढंग से कहा है।

9. प्रसिद्वअंग्रेज विद्वान डब्ल्यू0 पी0 केर के मतानुसार बैलेड वह कथात्मक गेय काव्य है, जो या तो लोककरण में ही उत्पन्न और विकसित होता है या लोकगाथा के सामान्य रूप विधान को लेकर किसी विशेष कवि द्वारा रचा जाता है जिसमे गीतात्मकता (लिरिकल क्वालिटी) और कथात्मकता, दोनों होती हैं, और जिसका प्रचार जनसाधरण में मौखिक रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में होता रहता है। (13)

अत: हम कह सकते हैं कि लोकगाथा किसी अज्ञात रचयिता द्वारा रचित सम्पूर्ण समाज की ऐसी धरोहर है जिसमें गेयता के साथ–साथ कथात्मकता का भी निर्वाह होता है। इसका प्रसार या प्रचार मौखिक रूप में जनसाधारण से होता है।

लोकगाथा और लोकगती :-

डा0 कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकगाथा और लोकगीतों में प्रधानतया दो प्रकार का भेद स्वीकार किया है: (1) स्वरूपगत भेद, (2) विषयगत भेद (14) स्वरूपगत भेद के अनुसार लोकगीत आकार में छोटा होता है परन्तु लोकगाथा का आकार अधिक विस्तृत होता है। जैसे झूमर या सोहर आठ या दस पंक्तियों का लोकगीत है परन्तु लोकगाथा का विस्तार हजारों पंक्तियों तक हो सकता है। आल्हा, ढोलामारू रा दूहा, राजा, रसालू, विजयमल आदि लोकगाथाएँ हजारों पंक्तियों के गीत, है जिन्हें लोकगायक कई दिनों तक गाते है।

दूसरा भेद विषयगत है। लोकगीतों में विभिन्न संस्कार, ऋतुओं पर्वो आदि पर गाए जाने वाले गीत सम्मिलित किए जाते हैं। इन गीतों में गृहस्थ जीवन का सम्पूर्ण वर्णन मिलता है। कहीं दुख है तो कही सूख। जीवन की विभिन्न अनुभूतियों का साक्षात्मकार मनुष्य करता है। इन्हीं अनुभूतियों की झाँकी लोकगीतों में मिलती है। परन्तु लोकगाथाओं का विषय तो दूसरा ही होता है। ''इसमें संदेह नहीं कि इन गाथाओं में भी प्रेम का पुट गहरा रहता है लेकिन यह संग्राम में अनेक संघर्षों का सामना करता हुआ अन्त में सफलीभूता होता हुआ दिखलाया गया है। इन लोकगाथाओं में युद्ध, वीरता, साहस, रहस्य और रोमांच का फुट अधिक पाया जाता है। '' (15)

लोकगाथा और गीतकथा :-

लोकगाथा और गीतकथा में लोककथा और लोकगीत के तत्व सम्मिलित रूप में मिलते हैं। गीतकथा में एक लोककथा अपने पद्यबद्ध रूप में विद्यमान रहती है। यह एक लोकसाहित्य के खंडकाव्य के समान है। लोकगाथा से विस्तृत होता है और उसमें कथा एक ही रहता है। अनेक पात्र एवं घटनाओं का संयोजन उसमें रहता है। प्राय: भिन्न–भिन्न क्षेत्रों की लोकगाथाओं में थोड़े बहुत

परिवर्तन के साथ एक समानता पाई जाती है। प्राय: लोकगाथाएँ लिखित रूप में गद्य ही प्रतीत होती है परन्तु कहने के विशेष ढंग से श्रोताओं को वे गोत के समान लगती हैं।

लोकगाथा की उत्पत्ति :-

लोकगाथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभित्र विद्वानों ने अपनी-अपनी कल्पना एवं अनुमान के आधार पर अनेक मत प्रस्तुत किए है। वास्तव में यह विषय अत्यन्त ही जटिल है क्योंकि हमें लोकगाथाओं की लिखित पाण्डुलिपि कहीं नहीं मिलती। प्राय: यह अनुमान का विषय है कि मानव सभ्यता के विकास के साथ नृत्य, गीत एवं गाथाओं का भी विकास हुआ। लेखन कला का उस युग में विकास न होने के कारण लोकगाथाओं ने लोकमत की अभिव्यक्ति मौखिक परम्परा द्वारा ही की। यही कारण है कि लूसी पौंड ने इसे लोक-हृदय में रहस्यात्मक रीति से प्रवहमान बताया है। (16) प्रो0 गुमर ने भी एक स्थान पर लिखा है कि लोकगाथाएँ ''बौद्विकता से बहिष्कृत (17) मानी जाती है। क्योंकि सभ्य साहित्य और मौखिक साहित्य में अन्तर होता है। प्राय: विद्वानों का मत है कि शिक्षित एवं सभ्य लोग मौखिक साहित्य को अनादर की दृष्टि से देखते हैं। यही कारण है कि प्रतिभगवान संस्कृति मौखिक साहित्य को आश्चर्यनतक ढंग से नष्ट कर देती है।'' (18)

लोकगाथाओं की उत्पत्ति के विषय में योरूप में दो प्रधान मत हैं ...(1) वे विद्वान जो समस्त लोक को लोकगाथाओं का रचयिता मानते हैं। इस मत के प्रवर्तक जैकव ग्रिम हैं। (2) इस मत का प्रतिपादन करने वाले विद्वानों का मत है कि जिस प्रकार किसी कविता का रचयिता एक कवि होता है उसी प्रकार लोकगाथा का रचयिता भी एक ही व्यक्ति होता है। इसके बावजूद ये विद्वान लोकगाथाओं पर सम्पूर्ण समाज के अधिकार को स्वीकार करते हैं। इसमें श्लेगल, किटरेज, विशपपर्सी आदि विद्वान आते हैं।

शंभूनाथसिंह लोकगाथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में तीन प्रधान मतों का उल्लेख किया है। (19)

(1) लोकनिर्मितिवाद (कम्यूनल ऑथरशिप), (2) व्यक्ति निर्मितिवाद (इन्डीवीजुअल ऑथरशिप) और (3) विकासवाद! इसमें प्रथम मत के मानने वाले ग्रिम, स्टीनथाल, टेनब्रिन्क आदि हैं। दूसरे मत के मानने वाले श्लेगल, विशपपर्सी, स्काट रिस्टन आदि हैं। और तीसरे मत के मानने वाले प्रमुख विद्वान चाइल्ड, एन्ड्रलैंग, केर आदि है। चाइल्ड आदि विद्वानों का विचार है कि लोकगाथाओं की रचना नहीं, उनका विकास हुआ है।

लोकगाथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में इस प्रकार छ: प्रमुख मत हैं:-

(1) जे0 ग्रिम - लोक निर्मितिवाद

(2) एफ0 बी0 गूमर - समुदायबाद

(3) स्टेन्थल - जातिवाद

(4) बिशपपर्सी - चाराणवाद

(5) ए0 डब्ल्यू0 श्लेगल - व्यक्तिवाद

(6) एफ0 जे0 चाइल्ड-व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद

1. ग्रिम का लोकनिर्मितिवाद:-

प्रसिद्वजर्मन भाषा-विज्ञानी जेकब ग्रिम का यह सिद्वान्त अत्यन्त ही महत्पूर्ण एवं मोलिक है। ग्रिम का मत है कि लोकगाथा का निर्माण आपसे आप होता है। किसी कवि द्वारा ये निमित नहीं होते है। इनका निष्पादन स्वत: संभूत है। (20) वास्तव में लोकगाथा लोकजीवन की अभिव्यक्ति है। यह सोचना नितान्त असंगत है कि ये किसी कवि द्वारा निमित होते हैं। (21) इसका निर्माण तो समुदाय (ब्वउउनदपजल)द्वारा ही होता है। अत: इस सिद्वान्त को 'कम्यूनल ऑथरशिप' (ब्वउउनदंस ंनजीवतेीपच)का सिद्वान्त कहते हैं। इसे 'समुदायवाद' भी कहा जाता है। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के हृदय में हर्ष-विषाद, सुख-दु:ख आदि भावनाएँ जाग्रत होती है। उसी प्रकार किसी विशेष समुदायक के लोगों में भी समष्टि रूप से हर्ष-विषाद की भावनाएँ उत्पन्न होती हैं और किसी विशेष अवसर -पर्व, त्यौहार आदि- पर इन लोकगाथाओं का निर्माण होता है ऐसे अवसर पर किसी एक व्यक्ति के हृदय में हर्ष-विषाद, सुख-दु:ख आदि भावनाएँ जाग्रत होती हैं उसी प्रकार किसी विशेष समुदाय के लोगों में भी समष्टि रूप से हर्ष-विषाद की भवनाएँ उत्पन्न होती हं और किसी विशेष अवसर -पूर्व, त्यौहार आदि-पर इन लोकगाथाओं का निर्माण होता है। ऐसे अवसर पर किसी एक व्यक्ति द्वारा एक कड़ी गाई जाती है। दूसरी इसी में दूसरी कड़ी जोड़ देता है और तीसरा व्यक्ति तीसरी। इस प्रकार एक

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 01 | January – March 2017

सामूहिक गीत का निर्माण हो जाता है। इसमें समुदाय के सभी व्यक्तियों का योग रहता। अतः लोक (फोक) ही इन लोकगाथाओं का रचायिता होता है।

ग्रिम ने अनेक स्थानों पर यह बात लिखी है कि जिस प्रकार इतिहास का निर्माण नहीं किया जा सकता उसी प्रकार महाकाव्य का भी निर्माण नहीं हो सकता। जनता ही इस प्रकार के काव्य का निर्माण करती है। जनता में इस प्रकार के काव्य का प्रचार स्वमेव हो जाता है। (22) अतः लोकगाथा जनता के द्वारा, जनता के लिए, जनता की कविता है।

आलोचना :- ग्रिस के सिद्धान्त की आलोचन भी हुई। उसके इस 'लोक निर्मितवाद' कुछ विद्धानों ने हास्यापस्पद कहा। (23) इन विद्वानों का प्रमुख तर्क यह है कि लोकगाथा की रचना के लिए जब समूह एकत्रित हुआ तब इस प्रथम कड़ी को गाने वाला कौन था? इस प्रथम की भावना का उदय किस प्रकार हुआ? ग्रिम के पास इसका कोई उत्तर नहीं था। यह कहना कि लोकगाथा की उत्पत्ति समुदाय द्वारा अंसगत हैं।

2. गूमर का समुदायवादः- गूमर का सिद्धन्त - ग्रिम का सिद्वान्त के अन्तर्गत ही आ जाता है। जहाँ ग्रिम ने लोकगाथाओं की उत्पत्ति पर व्यापक दृष्टि से विचार किया वहाँ गूमर ने संकुचित रूप से ग्रिम के सिद्वान्त को स्वीकारा। वास्तव में गूमर को भी 'लोक' शब्द अधिक व्यापक प्रतीत हुआ। परन्तु ग्रिम ही वह प्रथम विद्वान था जिसने 'लोक' के महत्व को स्वीकार किया। गूमर ने 'लोक' से संकुचित होकर एवं विशिष्ट समुदाय को महत्व को स्वीकार किया। उसने अपनी कटु आलोचना से बचने के लिए व्यक्ति के महत्व को एक सीमा तक ही स्वीकार किया। उसका तर्क है कि समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति ने लोकगाथा की रचना में सहयोग दिया है। अतः लोकगाथा व्यक्ति की सम्पत्ति न होकर समुदाय की सम्पत्ति है। वास्तव में समुदायिक स्वार्थ की प्रेरणा के वशीभूत होकरसमुदाय के लोगों ने लोकगाथाओं की रचना की । अतः प्रत्येक के व्यक्ति का इसमें सहयोग रहा। जिस प्रकार भारत में वर्षागम पर उन्मत रसिक समुदाय कजली गाने के लिए एकत्रित होता तो एक व्यक्ति एक कड़ी कहता तो दूसरा उसमें कड़ी जोड़ देता है और इस प्रकार यह क्रम रात-रात भर चलता है। इस प्रकार कजली गीतों का निर्माण हो जाता है।

(3) स्टेन्थल का जातिवाद :-

स्टेन्थल का यह सिद्वान्त ग्रिम के लोकनिर्मितवाद या समुदायवाद से काफी समानता रखता है स्टेन्थल अपने सिद्वान्त में ग्रिम और गूमर से भी एक पग आगे बढ़ गए है। ग्रिम के मतनुसार लोकगाथाओं का निर्माण कुछ व्यक्तियों के समुदाय के द्वारा हुआ। परन्तु स्टेन्थल के अनुसार किसी देश की समस्त जाति (त्दबम) ही लोकगाथाओं की रचना करती है। (।
)विसम तंबम बंद उंम चवमउ) (24) इनके मत से व्यक्ति सभ्यता तथा युग-युग के विकास की परिणति है। परन्तु आदिम जातियों में व्यक्ति के स्थान पर समष्टि की प्रधानता पाई
जाती है। असभ्य जातियों में भावना, एषण और मूल प्रवृतियाँ एक समान ही उपलब्ध होती हैं। जिस वस्तु का अनुभव कोई एक व्यक्ति करता है समष्टि भी उसी का अनुभव करती है। इस परिस्थिति में सामान्य सृजनात्मक भावना के द्वारा भाषा और कविता का निर्माण होता है। अतः लोकगाथा किसी विशेष की रचना न होकर सम्पूर्ण जाति की सम्पत्ति है।

(। ब्वउउवद बतमंजपअम `मदजपउमदज जीतवृ वनज जीम ृवतक ंदक उंमे संदहनंहमए . जीतवृ वनज जीम `वदह ंदक उंमे चवमजतलए छव वदम वृदे ृवतसकए ं सूंए ``जवतलए ं बनेजवउए छव वदम वृदे ``वदह) (25)

लोक (फोक) का निर्माण समान वंश या समान भाषा पर ही आधारित नहीं है अपितु एकता और जातीयता की भावना सर्वप्रथम भाषा में ही प्रकट होती है। इसके बाद कथाओं, उसके बाद धार्मिक रीति -रिवाजों में प्रकाशित होती है। विकसित संस्कृति तथा सभ्यता की एक निश्चित इकाई व्यक्ति है परन्तु प्रारम्भ में व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं था, समस्त जाति ही प्रधान थी। (26)

छोटे-छोटे या देश में अनेक ऐसी असभ्य तथा अर्द्व सभ्य जातियाँ है जिनके सम्पूर्ण
सदस्य एकत्रित होकर उत्सव मनाकर मनोंरजन करते है। इसी समय वे गीत और गाथाओं की
रचना करते है। अतः यह सिद्वान्त ऐसे ही छोटे देशों पर लागू होता है विशाल देशों पर नहीं। ग्रिम के सिद्वान्त की भाँति इस मत में भी कुछ सत्य का अंश है फिर भी पर इसे पूर्ण से स्वीकार नहीं किया जा सकता।

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 01 | January – March 2017

आलोचना :- वास्तव में ग्रिम, गूमर तथा स्टेन्थल के मत एक ही श्रेणी में आते हैं । ये एक दूसरे के पूरक है। अत: ग्रिम के मत के खण्डन में जो बातें कही गई है प्राय: वे ही इस मत पर लागू होती हैं। कुद विद्वानों के मत में स्टेन्थल का यह कथन-समस्त जाति लोकगाथाओं का निर्माण करती है- उतना ही हास्यास्पद है जितना यह कि सारी जाति शासन करती है। जिस प्रकार शासन कुछ निवोचितव्यक्ति करते है उसी प्रकार लोकगाथाओं की रचना कुछ विशेष लोककवियों द्वारा होती है।

4. विशपपर्सी का चारणवाद :-

विशपपसी का मत है कि लोकगाथाओं की रचना चरण या भाटों द्वारा होगी । (च्वमजतलूं बनसजपअंजमक इल उमद वि समजजमते)(27) विशपपर्सी ने अत्यन्त परिश्रम के साथ चारणकाव्य को 'फोलियों मैनुस्क्रिष्ट' में एकत्रित किया जिसके तीन भाग है इसका 'सल्लीमेन्ट' हेल्स तथा फरनिावल द्वारा लिखा गया है। विशपपर्सी का कहना है कि ये चरण ढोल-सांरगी बजाकर-गाकर भिक्षा माँगते है। साथ ही साथ वे गीतों की रचना करते चले जाते ह। इन्ही गीतों को 'मिन्ट्रल साँग ' कहते है। मिनस्ट्रल चरणों को कहते है। वाल्टर स्काट तथा जोसेफ रिट्सन आदि विद्वानों ने इसी सिद्वान्त को मान्य ठहराया। भारत में भी चारण या भाट द्वारा काव्यों की रचना हुई है । वीरगाथाकाल के पृथ्वीराज रासो, आल्हा खंड आदि के रचियता चन्दवरदाई तथा जगानिक भाट ही थे। परन्तु वे इंग्लैड के भाटों की तरह बाजे पर गगाकर भिक्षा नहीं माँगते थे।

इस प्रकार अधिकांश वीरगाथाओं का निर्माण चरणों द्वारा ही हुआ है। यह संभव है कि विस्तृत गीतों की रचना साधु-सन्तों की प्रतिभा का परिणाम हा परन्तु छोटे -छोटे वर्णनात्मक गीतों की रचना तो चारणों द्वारा ही हुई है। (28)

आलोचन :- उत्रीसवीं शताब्दीं में आकर इस मत की बड़ी कटु एवं तीव्र आलोचना हुई चाइल्ड ने ग्रामीण साधारण जनता से लोकगाथाएँ एकत्र की और अपने व्यक्तिगत अनुभव प्रस्तुत करते हुए इस मत का विरोध किया। (29) किटरेज ने लोकगाथा तथा चारणकाव्य को अलग-अलग वस्तु माना है। लोकगाथा अत्यन्त ही प्राचीन है और चारण काव्य मध्ययुगीन साहित्य है। चारणकाव्य और लोकगाथा में किसी प्रकार का भी सम्भव नहीं है। यह संभव है कि लोकगाथाओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाने का श्रेय चारणों को है। भारतवर्ष की लोकगाथाओं और वीरकाव्यों या चारणकाव्यों में किसी प्रकार का भी सम्बन्ध नहीं।

अत: चारणकाव्य और लोकगाथा की इस विभिन्नता को देखते हुए भी यह कहना नितान्त अनुसचित है कि उनमें कुछ भी सम्बन्ध नहीं। चारणों ने लोकगाथाओं से अनेक सत्य ग्रहण किए है। उन्होंने लोकगाथाओं से अनेक सामग्री ली है अत: उनमें एक प्रकार का सम्बन्ध है।

5. श्लेगल का व्यक्तिवाद :-

ए0 डब्ल्यू0 श्लेगल का व्यक्तिवाद अत्यन्त यथार्थवादी सिद्वान्त है। उत्रीवीं शताब्दी के आरम्भ में ही इस जर्मन विद्वान ने ग्रिम के सिद्वान्त को आति आदर्शवादी और कल्पनिक बताया। श्लेगल के मतानुसार किसी काव्य का रचयिता कोई न कोई अवश्य होग उसी प्रकार लोकगाथाओं का रचयिता भी कोई न कोई कलाकार होता है(30) जिस प्रकार किसी कलाकृति का निर्माता कोई न कोई कलाकार होता है, किसी कविता का रचयिता कोई न कोई अवश्य होता है किसी विशाल अट्टालिका के निर्माण के मूल में किसी एक कलाकार या कारीगर का मस्तिष्क रहता है, पत्थर पर तराशी मूर्तियाँ किसी एक मूर्तिकार का ही सपना होती है किसी विशिष्ट आकर्षण चित्र के पीछे भी किसी एक चित्रकार की तूलिका होती है उसी प्रकार लोकगाथाओं की रचना के मूल में भी किसी एक व्यक्ति की उद्भावना रहती है। (31) लोक-कविता के सम्बन्ध में भी यही बात समभ्फनी चाहिए। लोकगाथा की सुष्टि में अनेक लोककवियों का हाथ अवश्य होता है, परन्तु वह किसी विशिष्ट कवि की ही रचना होती है। समस्त काव्य प्राकृति और कला के ऊपर आश्रित होता है। अति प्राचीन प्रारम्भिक कविता का भी कोई उदेश्य होता है, उसमें भी एक योजना होती हैं। अत: उसका सम्बन्ध किसी विशिष्ट कलाकार से ही होता है। (।सस चवमजतल तमेजे नचवद ᾿ नदपवद वि दंजनतम ᾿दक ᾿तजय मअमद जीम मंतसपमेज चवमजतल ीं ᾿ चनतचवेम ᾿दक ᾿ चसंदए ᾿दक जीमतमवितम इमसवदहे जव ᾿द ᾿तजपेजण) (32)

वास्तव में श्लेगल का व्यक्तिवाद विसपपर्सी के 'चरणवाद' का पूरक है। लोकगाथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उनका यह मत अधिक मान्य है।

6. प्रो0 चाइल्ड का व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद :-

प्रो0 चाइल्ड लोक-साहित्य के प्रसिद्व, आचार्य हैं। इन्होंने बड़े परिश्रम से 'इग्लिश एण्ड स्कॉटिश पापुलस बैलेड्स' नामक एक ग्रन्थ लिखा है जो इनकी अमर कृति है। इस प्रसिद्वकृति में उन्होंने अपन यह मत' व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद' लोकगाथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पस्तुत किया है। उनका कथन है। कि लोकगाथाओं में उसके रचयिता के व्यक्तित्व का सर्वथा अभाव रहता है। उसकी रचना में उसकी वाणी मिलती अवश्य है परन्तु उसका व्यक्ति उसमें नहीं रहता। वह तो एक वाणी है व्यक्ति नहीं। (33) तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार किसी काव्य का कोई लेखक अवश्य होता है उसी प्रकार इन लोकगाथाओं की रचना भी किसी व्यक्ति-विशेष द्वारा होता है परन्तु उनमें उसके व्यक्तित्व का कोई महत्त्व नहीं होता। इसकी रचना व्यक्ति-विशेष द्वारा होती तो है परन्तु वह अनेक भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के द्वारा गाए जाने के कारण इन गाथाओं में इतना परिवर्तन एवं परिवर्द्वन हो जाता है कि गाथाओं के मूल रचयिता ही समाप्त या तिरोहित हो जाता है। इस प्रकार ये गाथाएँ व्यक्ति विशेष की न होकर जन-सामान्य कर धरोहर हो जाती हैं। यह परिवर्तन और परिर्द्वन मौखिक परम्परा के काराण ही होता है। यह परिवर्तन इतना होता है कि प्रथम रचना का रंग-रूप तक आमूल-चूल परिवर्तित हो जाता है। नए अंशों के आगमन से प्राचीन अंशों का पूर्ण लोप तक हो जाता है। इतना होने पर भी हम यह नहीं कह सकते कि यह रचना सम्पूर्ण समुदाय या समाज की है। यही कारण है कि चाइल्ड के इस मत को 'व्यक्तित्वहीन व्यक्तिवाद' कहा जाता है।

प्रो0 चाइल्ड का यह मत श्लेगल के सिद्वान्त से मिलता है। अन्तर इतना ही है कि चाइल्ड रचयिता के व्यक्तित्व को किसी प्रकार का महत्व नहीं देते। प्रो0 चाइल्ड के मत का समर्थन इनकी पुस्तक के भूमिका लेखक श्री जी0 एल0 किटरेज ने भी किया है। प्रो0 स्टोनस्ट्रप (डेनमार्क के लोकसाहित्याचार्य) ने इसी प्रकार का मत प्रस्तुत किया है। उन्होंने भी लोकगाथाओं के निर्माण में किसी कवि के व्यक्तित्व का खण्डन किया है।

यह बड़े आश्चर्य का विषय है कि भारतीय लोकसाहित्य के विद्वानों का ध्यान अभी तक साहित्य की उत्पत्ति की ओर नहों गया। भारतीय विद्वानों ने इतना अवश्य कहा है कि महाकाव्यों का निर्माण लोकगाथाओं या लोकप्रचलित कथाओं के आधार पर हुआ है। पं0 रामनरेश त्रिपाठी ने इस पर कुछ विचार अवश्य किया परन्तु वे भी किसी एक निश्चित मत को देने से असमर्थ रहे। उनके मतानुसार 'गीत-स्रष्टा स्त्री-पुरूष दोनों है, परन्तु ये स्त्री-पुरूष ऐसे हैं जो कागज और कलम का उपयोग नहीं जानते। यह संभव है कि एक गीत की रचना में बीसों वर्ष और सैकड़ों मस्तिष्क लगे हों। (34) त्रिपाठी जी के मत पर ग्रिम के लोकनिर्मितवाद का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

डा0 कृष्णदेव उपाध्याय ने भी लोकगाथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विचार कियाहै। उनका सिद्वान्त 'समन्वयवाद' का सिद्वान्त है। उपर्युक्त जिन छः सिद्वान्तों की चर्चा की गई है उन सभी में से सत्य का अंश निकाल कर उपाध्याय जी ने अपना समन्यवादी सिद्वान्त बनाया है। उनके इस सिद्वान्त में मौलिकता कहीं नहीं है। तो बस इतनी ही कि उन्होंने सभी मतों का समन्वय कर दिया। उन्होंने लिखा है कि लोकगाथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उपर्युक्त प्रचलित सिद्वान्त कारणभूत हैं। इन सबका सहयोग इन गाथाओं के निर्माण में हुआ है। (35) लोकगाथा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उन्होंने लिखा है- '' हमारी धारण सर्वदेशीय लोकगीतों अथवा गाथाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह है कि प्रत्येक गीत या गाथा का रचयिता कोई न कोई व्यक्ति अवश्य है साथ ही कुछ गीत या गाथा जन-समुदाय (फोक) का भी प्रयास हो सकता है। लोकगाथा की परम्परा सदा से मौखिक रही है। अतः यह बहुत संभव है कि गाथाओं के रचयिताओं का नाम लुप्त हो गया है।''(36) आगे उन्होंने लिखा है -''एक लेखक का होने पर भी मौखिक परम्परा के कारण भिन्न-भिन्न गवैयों ने इन गाथाओं में इतना अधिक अंश जोड़ दिया है कि वे अब एक लेखक की कृति न होकर पूरे समाज की सम्पत्ति बन गए हैं। (37)

वास्तव में हमारे विचार से लोकगाथाएँ ऐसी व्यक्तिगत रचनाएँ है जो परम्परा के कारण सम्पूर्ण समाज की सम्पत्ति बन गई हैं और जिनमें व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण अभाव है। लोकगाथाएँ लोक (फोक) की सम्पत्ति है। इसमें कुछ व्यक्तियों ने अपनी भी रचनाएँ जोड़ी हैं। प्राय :- लोगों ने लोकगाथाओं का अनुकरण ही किया है। ऐसे व्यक्तियों को कीटरेज ने 'गाइललेस कलेक्टर्स'

© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN: 2348 - 5612 | Volume: 04 Issue: 01 | January – March 2017

कहा है। (38) इस पर भी लोकगाथा ने अपने सहज स्वभाव को नष्ट नहीं होने दिया। अत: लोकगाथा की उत्पत्ति किसी एक व्यक्ति के प्रयास से हुई है। वह व्यक्ति चिरन्तन व्यक्ति है। उसने अपने व्यक्तित्व को समष्टि में विलीन कर दिया है। लोकगाथा एक सामाजिक संस्था है, जिसकी अन्तरात्मा में व्यक्ति बैठा हुआ है। उस व्यक्ति की अवहेलना हम कदापि नहीं कर सकते। (39)

संदर्भ

1. लोकसाहित्य – श्री झवेरचन्द मेघाणी – पृ0 50
2. राजस्थानी लोकगीत – पृ0 78
3. भोजपुरी लोकसाहित्य अध्ययन – पृ0 492
4. हिन्दी साहित्य कोश (1) – सं0 धीरेन्द्र वर्मा – पृ0 748
5. व्सक ठंससंके . थ्तंदा ैपकहूपबा . चंहम
6. जीम म्दहसपीं ठंससंके . प्दजतवकनबजपवदण
7. म्दहसपीं दक ैबवजजपीं च्वचनसंत . म्कपजमक इलण थ्श्रण बेपसक (प्दजतवकनबजपवद) च्ंहम 11ण
8. व्सक ठंससंके . प्दजतवकनबजपवद . च्ंहम 3ण
9. जीम ठंससंके . चंहम 8ण
10. जीम म्दहसपीं ठंससंके . प्दजतवकनबजपवद (म्कपजमक.त्वइमतज ळतंअमे) च्ण8ण
11. ब्ंइतपकहम भ्पेजवतल वf म्दहसपीं स्पमतंजनतम. ठंससंके टवसण प्प
12. क्पबजपवदंतल वf थ्वसा.स्वतम. टवसण . चंहम 106ण
13. फार्म एण्ड स्टाइल इन पोयट्री –पृ0 3
14. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (षोडशमाग)– प्रस्तावना – पृ0 74
15. वही – पृ0 75